हिन्दी : राष्ट्रभाषा तथा राजभाषा
(स्वरूप, प्रयोगक्षेत्र एवं महत्त्व)

डा० रवीन्द्र नाथ मिश्र

स्वर्गीय कविवर अज्ञेय जी के कथन से अपनी बात शुरू करना चाहूंगा। उनका कहना था कि "जब हम राजनीतिक दृष्टि से पराधीन थे, तब तो हमारे पास स्वाधीन भाषा थी, अब जब हम स्वतंत्र हो गये, तब हमारी भाषाएं पराधीन हो गयीं, और अंग्रेजी की सहचरी बन गयी।" (१)

आजादी के इतने वर्षों के बाद भी हिन्दी राजनीतिक दांव-पेंच के बीच धक्के खाती हुई राजभाषा के गौरव को प्राप्त नहीं कर सकी। चाहिए तो यह कि राष्ट्रभाषा हिन्दी को राज-काज की भाषा बनाने पर बल दिया जाए। लेकिन ऐसा न करके आज भारतीय भाषाओं में ही अलग-अलग जाने की प्रवृत्ति कुछ अधिक ही बढ़ रही है, जो कि चिन्ता का विषय है। जबकि भाषा का कार्य है परस्पर एक दूसरे को जोड़ना न कि तोड़ना। भाषा का संबंध किसी सम्प्रदाय, धर्म, जाति अथवा प्रदेश से नहीं होता। वह तो मानव-मात्र की सम्पत्ति होती है और मानव एकता का एक साधन है। भाषा एक ऐसा साधन है जिसका साध्य सद्भावना स्नेह तथा सहबोध का सनातन संदेश देना है। अतः हमें भाषा का उपयोग संकीर्ण स्वार्थों से मुक्त होकर मानव मात्र की मंगल-कामना एवं व्यापक हितसाधना से अनुप्रेरित होकर करना चाहिए। वही भाषा सराहनीय है, जो इस सनातन संदेश की संवाहक हो। विशेषता इस बात की है कि हिन्दी की व्यापकता और इसकी अपनी अस्मिता इतनी अधिक समृद्ध है कि लोगों को एक सूत्र में बांधे हुए है। इसके लिए दो महत्त्वपूर्ण आन्दोलनों को श्रेय जाता है। पहला मध्य युग में भक्ति आन्दोलन को, जिसके कारण ब्रजभाषा भक्तिभाषा के रूप में असम से केरल तक प्रतिष्ठित हुई। सामान्यजन के भीतर विश्वास का ज्वार आया, एक स्थान का अनुभव दूसरी जगह केवल रमते यात्रियों के द्वारा तत्काल पहुंचा। दूसरा आंदोलन महात्मा गांधी का स्वदेशी आन्दोलन है, जिसने कहां के कार्यकर्ता कहां भेजे। हिन्दी भाषी ने तमिल सीखी और तमिल भाषी ने हिन्दी सीखी। इसके कारण अपनी भाषिक अस्मिता को सबने समझा। राष्ट्रीय आन्दोलनों ने भारतीय भाषाओं को एक-दूसरे के समीप लाने का बहुत बड़ा काम किया। इसी का सूत्र बनी हिन्दी।

स्वतन्त्रता के बाद हिन्दी को राष्ट्रभाषा का गौरव प्रदान किया गया। इसके अनेक कारण हैं। हिन्दी समझने, बोलने के लिहाज से अन्य भारतीय भाषाओं की तुलना में सरल और सहज है। इसमें इतना अधिक लचीलापन है कि हर

प्रांत, देश की भाषा का बड़े स्वाभाविक ढंग से इसमें समायोजन हो जाता है। इस सम्बन्ध में फादर कामिल बुल्के का विचार है कि "हिन्दी न केवल देश के करोड़ों लोगों की सांस्कृतिक और सम्पर्क भाषा है वरन् बोलने और समझने की संख्या की दृष्टि से दुनिया की तीसरी भाषा है। भारत के सभी धर्मों और विभिन्न भाषा-भाषियों ने हिन्दी के विकास में योगदान दिया है। वह किसी विशिष्ट वर्ग, प्रदेश या समुदाय की भाषा न होकर भारतीय जनता की भाषा है।" (२)

हिन्दी भाषा के अखिल भारतीय महत्त्व के सम्बन्ध में डॉ० रामविलास शर्मा का मन्तव्य है कि "इसका पहला कारण यह है कि वह भारत की सबसे बड़ी जाति की भाषा है। दूसरा कारण यह है कि उत्तर भारत, बंगाल, गुजरात और महाराष्ट्र तक की भाषाओं और हिन्दी के शब्द भण्डार में इतनी ज्यादा समानता है कि लोग उसे आसानी से समझ लेते हैं। तीसरा कारण है कि राजस्थान के व्यापारी और पूंजीपति भारत के विभिन्न प्रांतों में फैले हुए हैं और साधारणत: वे हर जगह हिन्दी शिक्षा, प्रचार आदि में सहायता करते है। चौथा और महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि हिन्दी भाषी इलाके के मजदूर बम्बई, कलकत्ता जैसे बड़े-बड़े नगरों में भारी संख्या में मिलते हैं।" (३)

अफसोस की बात यह है कि जब हम महान बनना चाहते हैं तब भारतीय संस्कृति और महापुरुषों का गुणगान करते हैं। लेकिन जब भारतीय भाषाओं की बात आती है तब हम वैज्ञानिक सोच करने लगते हैं। हिन्दी भारत के एक विशाल भाग और जनसंख्या की भाषा है। बहुत विचार-विमर्श के बाद वह राजभाषा के रूप में स्वीकृत हुई। जिसमें अहिन्दी भाषी लोगों का विशेष योगदान है। हिन्दी सीखने के लिए सभी प्रदेशों में एक सहज इच्छा होनी चाहिए, और है भी। यदि उसके मार्ग में कोई बाधा है तो एक मात्र राजनीतिक षड्यंत्र है।

हिन्दी के महत्व पर प्रकाश डालते हुए विनोबा भावे ने कहा था—"जैसे इन्द्र-धनुष में भिन्न-भिन्न रंग होते हैं वैसे ही हिन्दुस्तान में भिन्न-भिन्न भाषाएं हैं। भारत के लोगों को दो-तीन भाषाओं का ज्ञान होना ही चाहिए। इससे खूब ज्ञान मिलेगा, बुद्धि व्यापक होगी, एक दूसरे की भाषा सीखने से प्रेम बढ़ेगा, व्यवहार सुगम होगा और हिन्दुस्तान की ताकत बढ़ेगी।" (४)

हिन्दी भाषा के महत्त्व पर अब बात करना समीचीन नहीं होगा, क्योंकि इसका महत्त्व स्वयं सिद्ध हो चुका है। चूंकि बात राजभाषा और राष्ट्रभाषा के संबंध में करनी है इसलिए इन दोनों के अन्तर को समझ लेना जरूरी है। राजभाषा किसी देश अथवा राष्ट्र के प्रशासनिक कार्यों में प्रयोग होने वाली भाषा होती है। प्रशासन के उलटफेर से यह बदलती रहती है। किन्तु राष्ट्रभाषा सम्पूर्ण राष्ट्र में विचरण करने वाली संपर्क भाषा होती है। राजभाषा यदि मस्तिष्क पक्ष का समर्थ करती है तो राष्ट्रभाषा राष्ट्र-हृदय का प्रतिनिधित्व करने वाली प्रमाणित होती है। जिस प्रकार व्यक्ति समाज और राष्ट्र का उत्थान भौतिक और आध्यात्मिक मूल्यों के समन्वय से अधिक संभव होता है उसी प्रकार किसी राष्ट्र की उन्नति के लिए राजभाषा और राष्ट्रभाषा का सामंजस्य होना जरूरी है। इसमें एक का महत्त्व राजनीतिक दृष्टिकोण से आंका जाता है, जबकि दूसरे का सांस्कृतिक एवं सामाजिक दृष्टि से।

राष्ट्रभाषा और राजभाषा में बहुत निकट का संबंध है। हर राजभाषा राष्ट्रभाषा होती है। जापान, अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस और जर्मनी में इसका भेद नहीं है। लेकिन अविकसित तथा विकासमान देशों में जहां स्थानीय तथा क्षेत्रीय भाषाओं के ऊपर किसी अन्य प्रभावशाली या

उपनिवेशी भाषा का प्रभाव होता है वहां यह भेद महत्त्वपूर्ण हो जाता है। जैसे हमारे देश में अंग्रेजी का प्रभाव अधिक है। इसलिए राजभाषा की समस्या बनी हुई है। राजभाषा शासक और शासित के बीच की भाषा होती है। इसमें शासन का बोध प्रमुख है।

राष्ट्रभाषा में राष्ट्रीयभावना और राष्ट्रीय गौरव का बोध अधिक प्रमुख है। राष्ट्रभाषा राष्ट्रीय अस्मिता की प्रतीक होती है। 'राष्ट्र' शब्द में समूचे देश की आंतरिक एक सूत्रता का बोध होता है। राष्ट्रभाषा स्वतंत्र देश की रीढ़ होती है। इस संबंध में अतीत का अवलोकन करें तो प्राचीन भारत में देश की राष्ट्र भाषाएं क्रमशः संस्कृत, पाली, प्राकृत, शौरसेनी और अपभ्रंश थीं और इन्हीं भाषाओं के माध्यम से तत्कालीन शासक राजकाज किया करते थे। अतः उस समय राजभाषा और राष्ट्रभाषा एक ही थी। मध्यकाल में मुसलमानों ने राजभाषा के रूप में फारसी को अपनाया। लेकिन राष्ट्र-भाषा के रूप में ब्रजभाषा हिन्दी का प्रचलन हुआ। कालान्तर में अंग्रेजों के शासनकाल में अंग्रेजी राजभाषा बनी और खड़ी बोली हिन्दी राजभाषा के रूप में संचरण करती हुई अखिल देश की सम्पर्क भाषा बन गई। कहने के लिए हिन्दी को राजभाषा का गौरव प्रदान किया गया है किन्तु व्यावहारिक रूप में आज भी राजभाषा का स्थान अंग्रेजी के कब्जे में है।

१९वीं और २०वीं सदी के देश के प्रायः सभी अहिन्दी भाषी विद्वानों और नेताओं ने हिन्दी को सार्वदेशिक भाषा के रूप में स्वीकार किया था। इसके महत्त्व पर प्रकाश डालने के बाद आइए हिन्दी की भौगोलिक व्यापकता और प्रयोग क्षेत्र के सम्बन्ध में बात कर ली जाए। डॉ० उदय नारायण दुबे के अनुसार "पश्चिम में अंबाला से बीकानेर और जैसलमेर तक, दक्षिण में तापी नदी बालघाट के दुर्ग तक, पूर्व में राय-पुर से भागलपुर तक एवं उत्तर में नेपाल की सीमा को छूते हुए गंगोत्री-यमनोत्री तक के १०५० मील लम्बे और लगभग ६०० मील चौड़े विस्तृत भू-भाग को हिन्दी प्रदेश के नाम से जाना जाता है।"(५) इसमें उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, हिमाचल, पंजाब, हरियाना, राज-स्थान और दिल्ली आदि के भू-भाग आते हैं। "सन् १९७१ की जनगणना के अनुसार भारत में हिन्दी बोलने वालों की संख्या डॉ० भोलानाथ तिवारी ने १५,३७,२९०६२ बताई है जो कि भारतीय भाषाओं की तुलना में सर्वाधिक है।" (६) हिन्दी भाषा के अन्तर्गत १७ मुख्य बोलियाँ हैं, जिनको पाँच उपवर्गों में बांटा गया है।

पश्चिमी हिन्दी—खड़ी बोली, हरियाणी, ब्रज-भाषा, कन्नौजी और बुन्देली।

पूर्वी हिन्दी-अवधी बघेली और छत्तीसगढ़ी।

राजस्थानी हिन्दी-मारवाड़ी, जयपुरी, मेवाणी और मालवी।

बिहारी हिन्दी-भोजपुरी, मगही और मैथिली।

पहाड़ी हिन्दी—कुमायूंनी और गढ़वाली।

प्रारम्भिक काल में भारत की भाषा होने के कारण संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश को हिन्दी कहा गया। वैसे हिन्दी का उदय काल आदिकाल माने तो साहित्य में डिंगल और पिंगल का विशेष महत्त्व है। मध्यकाल में मुख्य रूप से हिन्दी की तीन बोलियों में अवधी, ब्रज और खड़ी बोली को विशेष स्थान प्राप्त था। अवधी और ब्रजभाषा में भरपूर साहित्य लिखा गया। आधुनिक काल आते-आते खड़ी बोली का महत्त्व बढ़ता गया। कालान्तर में इसका प्रचार-प्रसार काफी हुआ।

भारतीय इतिहास में मुस्लिम शासन काल ने भारतीय जनमानस को कला, साहित्य और संस्कृति आदि अनेक क्षेत्रों में प्रभावित किया जिसका प्रभाव आज भी विशेषतः उत्तर भारत

की संस्कृति पर दिखाई देता है। खड़ी बोली हिन्दी का आविर्भाव भी इसी काल में हुआ, इसलिए इसके विषय में संक्षिप्त जानकारी प्राप्त कर लेना समीचीन होगा।

भारत में तुर्क अफगान शासन तंत्र १२०६ से १५२५ ई० तक और मुगल शासन तंत्र १५२५ से १८०३ ई० तक माना जाता है। डॉ० नजीर मुहम्मद का विचार है कि "भारत में हिन्दी शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग अमीर खुसरो (१२५३-१३२५ई०) की "खालिकवारी" में प्राप्त होता है। 'खालिकबारी' कोषग्रंथ है। इसमें बारह बार हिन्दी और पचपन बार 'हिन्दवी' शब्द का प्रयोग किया गया है। यहां हिन्दी का अर्थ है 'हिन्द' की भाषा और हिन्दवी का अर्थ है हिन्द के निवासियों या हिन्दुस्तानियों की भाषा।"(७) वैसे इस काल में राजनीतिक उथल-पुथल के अशांतिमय वातावरण में हिन्दी को यथेष्ठ प्रश्रय नहीं मिला। इन विदेशी शासकों की मातृभाषा तुर्की, धर्मभाषा अरबी और राजभाषा फारसी थी। इसलिए उन्होंने देश की प्रमुख भाषा हिन्दी की ओर ध्यान ही नहीं दिया। कालान्तर में मुसलमानों का सम्बन्ध ज्यों-ज्यों हिन्दुओं से बढ़ता गया, त्यों-त्यों उन्होंने सम्पर्क भाषा हिन्दी के महत्त्व को समझा। नेहरू का कथन है कि "बहुत दिनों तक मुसलमानों के द्वारा भी हिन्दी की अवहेलना नहीं की जा सकी।" (८) मुगल-शासन काल में राजनीतिक स्थिरता के कारण हिन्दी को फलने-फूलने का विशेष अवसर मिला। इसका कारण था मुगलों की कला-प्रियता। डा. उदय नारायण दुबे का कथन है कि "मुगल साम्राज्य के वास्तविक संस्थापक सम्राट अकबर की कलाप्रियता उसके विद्यानुराग और उदारवादी दृष्टिकोण ने भारतीय संस्कृति और कला में एक अद्भुत मोड़ उपस्थित कर दिया।" (९) अकबर के दरबार में सभी कलावन्तों को विशेष सम्मान प्राप्त था। फारसी के साथ हिन्दी कवियों को भी विशेष आदर मिलता था। मुगल शासन काल के अन्तर्गत हिन्दी को व्यापक बनाने का श्रेय उस काल की धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, व्यापारिक और साहित्यिक परिस्थितियों को भी जाता है।

जैसा कि मैंने पहले ही संकेत किया है कि हिन्दी को बढ़ावा देने में भक्ति आन्दोलन का विशेष हाथ है। इस काल में निर्गुण और सगुण संतों ने हिन्दी को व्यापकता प्रदान करने में सफल भूमिका का निर्वाह किया। सांस्कृतिक दृष्टि से भारत सदा ही एक रहा है भारत के चारों कोनों में स्थित चार तीर्थधाम इसकी सांस्कृतिक एकता के आधार स्तम्भ हैं।

मुस्लिम शासनकाल में तीर्थ यात्रियों के आवागमन से हिन्दी को सार्वदेशिक भाषा के रूप में विकसित होने का सुअवसर मिला। राजनीतिक क्षेत्र में राजकाज के कार्यों हेतु आपसी तालमेल से हिन्दी भाषा का प्रचार हुआ। साम्राज्यवादी विस्तार के तहत हिन्दी उत्तर से दक्षिण पहुंची। व्यापारियों का आवागमन सम्पूर्ण देश में था। डा० शर्मा के विचार से "केन्द्रीय प्रदेश में हिन्दी व्यापार की भाषा होने के कारण अंतर प्रान्तीय व्यवहार के लिए भी उसका प्रयोग होता था।" (१०) मुगल काल में राजभाषा फारसी के होते हुए भी लोक भाषा के रूप में हिन्दी का ही प्रचलन था।

ब्रिटिश शासन काल में पाश्चात्य शिक्षा और साहित्य के प्रभाव के कारण भारतीय जीवन एवं चिंतन में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ, जिसका प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा। प्रारम्भिक दौर में अशिक्षा और गरीबी के कारण लोगों ने अंग्रेजों की गलत नीतियों पर कोई ध्यान नहीं दिया। भाषा के क्षेत्र में फोर्ट विलियम कालेज की स्थापना अपने आप में एक महत्त्वपूर्ण बात थी। इससे भाषा के क्षेत्र में जो नीति निर्धारित की गई उसका कालान्तर में मधुर एवं तिक्त प्रभाव

दिखाई पड़ता है। गिलक्राइस्ट की भ्रमपूर्ण भाषा नीति साम्प्रदायिक भावना से युक्त थी। वे स्वयं रोमन और फारसी लिपि के पक्षपाती थे। १८०४ से १८२३ ई० तक हिन्दी भाषा की स्थिति दुविधापूर्ण थी। सन् १८२३ के बाद विलियम प्राइस की नियुक्ति के बाद इस क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। जिस समय कम्पनी ने भारत का शासन सूत्र अपने हाथ में लिया उस समय उसके सामने चार प्रमुख भाषाएं थी।

(१) अंग्रेजी कम्पनी सरकार की अपनी निजी भाषा थी जिसका प्रचार करना तथा जिसे राज-भाषा का पद दिलाना कम्पनी अपना परम कर्त्तव्य समझती थी।

(२) फारसी राजभाषा थी अवश्य, किन्तु सर्व साधारण में इसका प्रचलन नाममात्र के बराबर था।

(३) हिन्दी लोक भाषा के रूप में सर्वत्र बोली और समझी जाती थी।

(४) बंगला कम्पनी सरकार की केन्द्र की भाषा थी। १८३४ में लार्ड मैकाले भारत आए। उन्होंने अंग्रेजी द्वारा भारतियों को शिक्षा देने पर बल दिया। इस प्रकार धीरे–धीरे अंग्रेजी का प्रचार काफी व्यापक होता गया। अंग्रेजों ने राजकाज की भाषा के रूप में अंग्रेजी को ही अपनाया। जन सामान्य में हिन्दी उर्दू का बोल-बाला था। अदालतों की भाषा पहले उर्दू थी बाद में हिन्दी को स्थान दिया गया। दो प्रकार के विद्यालयों की स्थापना भी हुई। इस दौरान राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द और राजा लक्ष्मण सिंह ने हिन्दी भाषा और नागरी लिपि के महत्त्व को स्थापित करने का अथक प्रयास किया। इनके अतिरिक्त फोर्ट विलियम कालेज में नियुक्त किए गए अध्यापकों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की।

१८५७ की क्रान्ति के बाद भारतीय राजनीति में एक नया मोड़ आया। भारत की शासन सत्ता कम्पनी सरकार के हाथ से निकलकर महारानी विक्टोरिया के हाथ में चली गयी। कम्पनी सरकार के अत्याचारों से जनता पीड़ित हो चुकी थी। विक्टोरिया ने कुछ सुधारों की घोषणा जरूर की लेकिन वे मात्र हवाई फायर ही थे। १८५७ की क्रान्ति को अंग्रेजों ने बर्बरतापूर्ण ढंग से दबाया जिसके फलस्वरूप प्रत्येक क्रिया के बराबर विपरीत प्रतिक्रिया हुई और धीरे–धीरे स्वाधीनता की आग और सुलगती गई। इसके पश्चात् स्वदेशी आन्दोलनों का दौर चला जिसमें भारतेन्दु ने 'निज भाषा उन्नति अहै. सब उन्नति को-मूल' को भी स्वर प्रदान किया।

निज भाषा आन्दोलन के विषय में और कुछ कहने के पूर्व ब्रिटिश शासन काल में भाषा की दशा से अवगत हो लेना जरूरी है।

भारतीयों की इच्छा के प्रतिकूल अंग्रेजी समस्त भारत में राजकाज तथा शिक्षा के माध्यम के रूप में छा गयी थी। अंग्रेजों की सम्पर्क भाषा अंग्रेजी थी। अखिल भारतीय सम्पर्क भाषा, जिसे राष्ट्र भाषा भी कहा जा सकता है, हिन्दी थी। प्रादेशिक स्तर पर प्रान्तीय भाषाएं विचार–सम्पर्क का कार्य करती थीं। साहित्यिक भाषा के रूप में अंग्रेजी का वर्चस्व था लेकिन अन्य भारतीय भाषाओं में भी साहित्य का सृजन हो रहा था। जैसा कि लगभग आज भी है।

इस प्रकार स्वाधीनता संघर्ष के साथ–साथ निज भाषा का आन्दोलन भी बड़ी तेजी से चल रहा था। 'निज भाषा' के रूप में हिन्दी आन्दोलन का क्षेत्र एवं उद्देश्य था कि अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को समस्त प्रदेश की राजभाषा बनाने के लिए प्रयास किया जाए। केन्द्रीय राजभाषा अंग्रेजी की जगह हिन्दी को व्यवहार के रूप में प्रयोग करना आन्दोलन का अन्यतम उद्देश्य था; और सम्पर्क भाषा के रूप में अंग्रेजी की बढ़ती हुई प्रवृत्ति को रोका जाए; यह दूसरी महत्त्वपूर्ण बात थी।

हिन्दी को राज भाषा के रूप में मान्यता दिलाने के लिए धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाएं, राजनीतिक संस्थाएं और साहित्यिक संस्थाओं ने महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। १९वीं शती के दूसरे दशक के मध्य भारत में सरकारी तौर पर ईसाई पादरियों को ईसाई धर्म के प्रचारार्थ पूर्ण छूट मिल चुकी थी। पादरी लोग अपने धर्म की उदारता के अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन के साथ हिन्दू धर्म की निंदा किया करते थे। सामाजिक विकृतियों के परिणाम स्वरूप हिन्दू जनता स्वधर्म का परित्याग कर ईसाई धर्म स्वीकार करने लगी थी। ऐसे समय में नई शिक्षा से प्रभावित नवीन चेतना को आत्मसात करने वाले अनेक भारतीय विचारकों और सुधारकों का उदय हुआ जिन्होंने अनेक समाज सुधारवादी संस्थाओं की स्थापना की। इनमें ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, आर्य समाज, थियोसोफिकल सोसाइटी, रामकृष्णमिशन और सनातन धर्म आदि हैं। इन संस्थाओं ने निज भाषा हिन्दी के प्रचार प्रसार में महत्त्व पूर्ण योगदान दिया। समाज सुधार के साथ-साथ शिक्षा के क्षेत्र में भी इन संस्थाओं की प्रशंसनीय भूमिका रही। हिन्दी भाषा के संबंध में समाज सुधारकों द्वारा दिए गए वक्तव्य ही उनकी निष्ठा को व्यक्त करते हैं। राजा राममोहनराय का मत था कि "यदि अखिल भारतीय भाषा बनने की पूर्ण क्षमता किसी भी भाषा में है तो वह सिर्फ हिन्दी में ही है। (११)

इसी संदर्भ में दयानन्द सरस्वती के विचार- 'भाई मेरी आँखें तो उस दिन को देखने के लिए तरस रही हैं जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक सब भारतीय एक भाषा को समझने और बोलने लग जाएंगे।' (१२)

विशेषकर स्वामी दयानंद सरस्वती ने इस दिशा में अथक प्रयास किया।

राजनीतिक संस्थाओं में अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना से, निज भाषा के क्षेत्र में एक नया मोड़ आया। देश में हो रहे राष्ट्रीय आन्दोलनों से भारत का समस्त वातावरण राष्ट्रीयतामय हो गया। राजनीति के क्षेत्र में गांधीजी के आगमन से एक नई आशा की किरण फूटी। मुक्ति आन्दोलन की बागडोर सँभाले गांधी बाबा ने धर्म, दर्शन, समाज और शिक्षा के क्षेत्र में भी अपने नूतन विचारों से लोगों को अवगत् कराया। राष्ट्रभाषा को निम्न लिखित पांच लक्षणों से युक्त बताया।

(१) वह राजकीय कर्मचारियों के लिए सरल हो।

(२) उस भाषा के द्वारा भारतवर्ष के परस्पर के धार्मिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवहार निभ सकें।

(३) उस भाषा को देश के अधिकांश निवासी बोलते हों।

(४) वह भाषा राष्ट्र के लिए सरल हो।

(५) वह भाषा क्षणिक या अल्प स्थाई स्थिति के ऊपर निर्भर न हो।

गांधी जी हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने को लड़ाई आजीवन लड़ते रहे। गांधी जी के अतिरिक्त विभिन्न प्रान्तों में अनेक राजनेताओं और और बुद्धिजनों ने इस कार्य में सहर्ष योगदान दिया।

साहित्यिक संस्थाओं में भारतेन्दु मंडल में पंडित बालकृष्ण भट्ट, प्रताप नारायण मिश्र, राधाचरण गोस्वामी, अम्बिका दत्त व्यास और ठाकुर जगमोहन सिंह आदि ने हिन्दी के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया। आगे चलकर इस कार्य को पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से खड़ी बोली हिन्दी को स्थापित किया। द्विवेदी जी द्वारा किए गए कार्यों को हम भगीरथ प्रयत्न ही कह सकते हैं।

इसके अतिरिक्त हिन्दी के क्षेत्र में नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी, हिन्दी साहित्य सम्मे-

लन प्रयाग और दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा मद्रास आदि छोटी-बड़ी अनेक संस्थाओं ने हिन्दी के प्रचार-प्रसार में विभिन्न तरह से योगदान किया है और कर रही हैं। ये संस्थाए देश के लगभग सभी बड़े शहरों में स्थापित हैं। उदाहरण स्वरूप गुजरात विद्यापीठ अहमदाबाद, महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा प्रचार समिति पूना, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा धारवाड़ अखिल भारतीय हिन्दी परिषद तथा साहित्य अकादमी नई दिल्ली आदि।

आज हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन भारत से बाहर सौ से अधिक विश्व विद्यालयों में हो रहा है। संचार माध्यमों से हिन्दी का प्रचार करने वाले भारत से बाहर फैले हुए हैं। भौगोलिक दृष्टि से हिन्दी बोलने वालों की सीमा का निर्धारण मैंने पहले ही कर दिया है लेकिन भारत की वह सीमा लांघकर हिन्दी भारत के बाहर नेपाल, भूटान, सिंगापुर, मलेशिया, थाईलैण्ड, हांगकांग, फिजी, मारीशस, त्रिनिदाद, गुयाना, सूरीनाम, इंग्लैण्ड, कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका में पहुँच गई है। हिंदी मेरठ के आस-पास की बोली मात्र नहीं है, उसमें ब्रज, अवधी, भोजपुरी, राजस्थानी, पहाड़ी, बुन्देली, मालवी और नीमाड़ी और जाने कितनी उपजनभाषाओं के शब्द भण्डार मुहावरे और उनकी लोकोक्तियां रचपच गयी हैं। हिन्दी में अरबी, फारसी और अंग्रेजी के शब्द भी खपाये हैं। इसकी अपनी सरलता, सहजता और सरसता का गुण अलग ही है।

उपरोक्त तमाम विशेषताओं के बाद भी देश में हिंदी पूरी तरह प्रतिष्ठित नहीं हो सकी। अनेक संस्थाएँ इसके प्रचार में दिन-रात कार्य कर रही हैं। आए दिन लम्बे-लम्बे भाषणों और संगोष्ठियों का आयोजन भी हो रहा है। पुरस्कार की बड़ी-बड़ी धनराशि भी आवंटित की जा रही है। संचार माध्यमों के द्वारा भी इसका बोल-बाला बढ़ा है। इन सबके बावजूद हिन्दी भाषा को राजभाषा का जो गौरवपूर्ण स्थान मिलना चाहिए था वह नहीं मिला। आजादी के बाद जिस प्रकार भारतीय जनता का मोहभंग विविध क्षेत्रों में हुआ, उसी प्रकार राष्ट्रभाषा और राजभाषा को लेकर भी हुआ है। इसका कारण है कि शासन द्वारा साहित्यकारों एवं हिन्दी सेवियों द्वारा इस दिशा में ईमानदारी एवं सही निष्ठा से कार्य नहीं किया जा रहा है। भारत की माटी में जन्मी हिन्दी आज मात्र पांच सितारा होटलों में धूमधाम आयोजनों तक सीमित हो गयी है। अनेक संवैधानिक प्रावधानों के बीच उलझती हिन्दी को अभी सही जगह नहीं मिल पायी है। इस दिशा में अभी बहुत कुछ करना है।

संदर्भ-सूची

१— नवभारत टाइम्स, १२ सितम्बर १९९३
२— सम्पर्क भाषा हिन्दी-सं०भोलानाथ तिवारी पृष्ठ ९१
३— भाषा और समाज- सं० रामविलास शर्मा पृष्ठ ३८०.
४— सम्पर्क भाषा हिन्दी-सं०भोलानाथ तिवारी पृष्ठ ८९
५— राजभाषा के संदर्भ में हिन्दी आंदोलन का इतिहास—डॉ०उदयनारायण दुबे पृष्ठ ५२
६— सम्पर्क भाषा हिन्दी-सं०भोलानाथ तिवारी पृष्ठ ५२
७— वही — पृष्ठ २०६
८— राजभाषा के संदर्भ में हिन्दी आन्दोलन का इतिहास — डॉ० उदयनारायण दुबे, पृष्ठ ६९
९— वही पृष्ठ ७०
१०— वही पृष्ठ ७६
११— वही पृष्ठ १३९
१२— वही पृष्ठ १४५